



रामप्यारे रसिक के काव्य साहित्य का अध्ययन

¹डॉ. स्नेहलता निर्मलकर और ²नीलम सोनी

¹सह-प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, डॉ.सी.व्ही. रमन वि.वि., करगी रोड, कोटा, बिलासपुर, छत्तीसगढ़, भारत।

²शोधार्थी, हिन्दी विभाग, डॉ.सी.व्ही. रमन वि.वि., करगी रोड, कोटा, बिलासपुर, छत्तीसगढ़, भारत।

सारांश

पद्य साहित्य की सैद्धान्तिकी का प्रश्न साहित्य का मूल प्रश्न है। पद्य और गद्य का विभाजन क्रमशः हमारे साहित्यशास्त्रियों ने कर दिया, लेकिन प्राचीन काल में साहित्य मात्र को पदम की कहा जाता था। अतः इस दृष्टि से पदम अथवा कविता साहित्य की सर्वाधिक प्राचीन विधा है। कविता की परिभाषा करते हुए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इसे “मुक्तावस्था” कहा है मुक्तावस्था का तात्पर्य स्पष्ट करते हुए शुक्ल जी ने “मनुष्य को लोक सामान्य की भाव भूमि पर पहुँचना” बताया है। यानी कविता के माध्यम से हम अपने को जानने का सूत्र पाते हैं। कविता बाहरी आवरणों के भेदकर मनुष्य को उसके मूल तक पहुँचाने का कार्य करती है। कविता की भाषा बिम्ब बहुला एवं सघन भाषा होती है। इसीलिए गद्य की स्थूलता एवं तथ्यात्मकता से कविता अपने को अलग कर लेती है।

मुख्य शब्द: पद्य, यथार्थ, साहित्य, लोक सामान्य, मुक्तावस्था।

1. प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य की दो प्रमुख विधाएँ हैं गद्य और पद्य। पद्य साहित्य वह साहित्य है जिसमें भावों, विचारों और अनुभूतियों को छंद, लय, तुक, अलंकार तथा काव्यात्मक भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त किया जाता है। हिन्दी पद्य साहित्य अत्यंत समृद्ध और विविधतापूर्ण है। इसमें भारतीय समाज, संस्कृति, धर्म, प्रकृति, प्रेम, भक्ति, राष्ट्रीय चेतना तथा मानवीय संवेदनाओं का सुंदर चित्रण मिलता है। हिंदी पद्य साहित्य का विकास विभिन्न कालखंडों में हुआ है। आदिकाल में वीरता और युद्ध का वर्णन प्रमुख रहा। इस काल के कवियों ने वीर योद्धाओं तथा राजाओं के पराक्रम को अपनी रचनाओं का विषय बनाया। भक्तिकाल हिन्दी पद्य साहित्य का अत्यंत महत्वपूर्ण युग माना जाता है। इस काल में कबीर, सूरदास, तुलसीदास, मीराबाई आदि महान कवियों ने भक्ति, प्रेम, मानवता और आध्यात्मिक चेतना को अपनी कविताओं में अभिव्यक्त किया। रीतिकाल में श्रृंगार, सौंदर्य, नायिका-भेद और अलंकारों को विशेष महत्व मिला। बिहारी, केशवदास, भूषण आदि कवियों ने इस काल को समृद्ध किया।

आधुनिक काल में हिन्दी पद्य साहित्य के विषयों में व्यापक परिवर्तन आया। राष्ट्रीय भावना, सामाजिक सुधार, स्वतंत्रता आंदोलन, प्रकृति, मानवतावाद और व्यक्तिगत अनुभूतियाँ कविता के महत्वपूर्ण विषय बने जिसमें रामप्यारे रसिक का नाम भी प्रसिद्ध है।

2. रामप्यारे रसिक का जीवन परिचय

“हिंदी साहित्य की परंपरा में ऐसे साहित्यकार समय-समय पर हुए हैं, जिन्होंने अपने लेखन से समाज की चेतना को झकझोरा और साहित्य को यथार्थ के धरातल पर उतारकर उसकी सामाजिक प्रासंगिकता को सिद्ध किया। छत्तीसगढ़ की माटी से जुड़ा एक ऐसा ही नाम है – “रामप्यारे रसिक”। वे केवल कवि या गद्यकार नहीं थे, बल्कि समाजशास्त्री, इतिहास बोध से संपन्न चिंतक, निर्भीक पत्रकार और संघर्षशील व्यक्तित्व थे। रामप्यारे रसिक का वास्तविक नाम राम प्यारे राम था। उनका जन्म 16 सितंबर 1933 को उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जिले के नोखा गाँव में हुआ। पिता श्री गंगाराम कश्यप साहित्य और पत्रकारिता में रुचि रखते थे, जबकि

माता श्रीमती बोदो देवी घरेलू और धार्मिक संस्कारों से संपन्न थीं। दुर्भाग्यवश, रसिक जी की माता का निधन उनके बचपन में ही हो गया। इस कारण बालक रामप्यारे ने मातृत्व का स्नेह अल्पायु में ही खो दिया। पिता ने दूसरी पत्नी मंजरी देवी से पुनर्विवाह किया, जिन्होंने अपने मातृत्व के वात्सल्य से दोनों अबोध बच्चों – “रामप्यारे और चंपा का पालन-पोषण किया। गंगाराम कश्यप जीविका की खोज में मिर्जापुर छोड़कर छत्तीसगढ़ के अंबिकापुर पहुँचे और यहीं स्थायी रूप से बस गए। यद्यपि जीवन-भर उनका स्वास्थ्य अस्थिर रहा, फिर भी उन्होंने परिवार को सँभालने का हर संभव प्रयास किया। 1959 में उनके निधन के बाद मात्र 26 वर्ष की उम्र में ही रामप्यारे रसिक पर परिवार की सम्पूर्ण जिम्मेदारी आ गई।

3. रामप्यारे रसिक की प्रमुख कृतियाँ

रामप्यारे रसिक की कृतियाँ विधा-विविधता और विषय-विस्तार की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। उन्होंने गीत, भजन, ग़ज़ल, व्यंग्य, गद्य और लोककथा जैसे विविध साहित्यिक रूपों में लेखन किया। उनकी रचनाओं में सरगुजा अंचल की संस्कृति, संवेदना और लोकमानस की झलक स्पष्ट दिखाई देती है।

➤ प्रमुख कृतियाँ:-

- श्वेतांबरा
- पूजा के फूल
- सरगुजिया रामायण
- पलकों में समंदर
- सलमा के बेटे
- पूजा के फूल
- हमारी धरोहर
- लोककथाएँ
- दर्दों का काफ़िला
- अक्षर गीत
- माटी के गीत
- सतरंगी करौंदा
- बांध ले पिरितिया के डोर
- क़लाम ए रसिक
- जंगली प्रजातंत्र

इन रचनाओं से यह स्पष्ट होता है कि रसिक जी ने साहित्य की विविध विधाओं में अपनी सृजनात्मकता का परिचय दिया और समाज के हर पक्ष को स्पर्श करने का प्रयास किया।

3. राम प्यारे रसिक जी का काव्य साहित्य का परिचय

राम प्यारे रसिक जी का काव्य साहित्य बहुआयामी संवेदनाओं और व्यापक जीवनानुभवों का समन्वित स्वरूप है। उनकी काव्यधारा में सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और राजनीतिक चेतना का अद्भुत संतुलन दिखाई देता है। वे केवल भावुकता के कवि नहीं, बल्कि लोकजीवन की गहरी समझ रखने वाले संवेदनशील चिंतक भी हैं।

उनकी रचनाओं में समाज की विसंगतियों, मानवीय संबंधों की ऊष्मा, परंपराओं की गरिमा और समकालीन परिवर्तनों की आहट एक साथ सुनाई देती है। रसिक जी की साहित्य साधना का सबसे विशिष्ट आयाम सरगुजिया रामायण है। रामायण भारतीय संस्कृति का वह आदर्श ग्रंथ है, जो केवल धार्मिक आस्था का आधार नहीं, बल्कि मानवीय मूल्यों, कर्तव्यबोध, त्याग, मर्यादा और आदर्श जीवन का मार्गदर्शक भी है। प्रत्येक हिंदू परिवार में रामायण का स्थान भक्त और भगवान के संबंध जैसा आत्मीय और श्रद्धामय है। इसकी व्यापकता का अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि संसार की प्रायः सभी समृद्ध भाषाओं में इसका अनुवाद हुआ है। यह केवल एक महाकाव्य नहीं, बल्कि समूचे मानव समाज के लिए प्रेरणा और नैतिक दिशा का स्रोत है। जब तक मानव समाज इस पृथ्वी पर विद्यमान रहेगा, रामायण की प्रासंगिकता और उसकी जीवनदायी चेतना अक्षुण्ण बनी रहेगी। राम प्यारे रसिक जी ने इस लोकपरंपरा को साहित्यिक स्वर प्रदान करने का महत्वपूर्ण कार्य किया।

उन्होंने सरगुजिया बोली में रामकथा को सरल, सरस और रोचक शैली में प्रस्तुत कर उसे जन-जन तक पहुँचाने का प्रयास किया। उनकी सरगुजिया रामायण केवल एक धार्मिक आख्यान नहीं, बल्कि लोकभाषा के संरक्षण और संवर्धन का सशक्त माध्यम भी है। इस कृति के माध्यम से उन्होंने यह सिद्ध किया कि लोकभाषाएँ केवल बोलचाल का माध्यम नहीं, बल्कि समृद्ध साहित्य सृजन की समर्थ वाहक भी हो सकती हैं। उनकी भाषा में सहजता है, भावों में आत्मीयता है और प्रस्तुति में ऐसी प्रवाहमयता है जो पाठक को कथा से आत्मसात कर देती है।

रसिक जी के काव्य में मानव मूल्यों के प्रति गहरी आस्था दिखाई देती है। वे अपने साहित्य के माध्यम से समाज में नैतिक चेतना, सहिष्णुता और सद्भाव का संचार करना चाहते हैं। उनके व्यक्तित्व की सरलता और संघर्षशीलता उनकी आत्मकथ्य पंक्तियों में स्पष्ट झलकती है—

“लेकर छाले बस पाँवों में
मैं चलता रहा अभावों में,
बस पीड़ाओं का ही अब तक,
करता आया हूँ मैं संचय;
बस इतना ही मेरा परिचय।”

राम प्यारे रसिक जी की साहित्यिक यात्रा वर्ष 1968 से प्रारंभ हुई थी, जब उन्होंने साप्ताहिक “सरगुजा संदेश” में साहित्य संपादक के रूप में दायित्व संभाला। यही वह कालखंड था, जहाँ से उनकी सृजनशील साधना ने एक सुसंगठित और निरंतर प्रवाह ग्रहण किया। तब से लेकर जीवन के अंतिम श्वास तक उनकी साहित्य यात्रा अविराम चलती रही। संपादन कार्य के माध्यम से उन्होंने न केवल स्वयं को परिष्कृत किया, बल्कि क्षेत्रीय साहित्य को भी नई दिशा और पहचान प्रदान की।

उनकी रचनाएँ सरस, सुबोध, प्रभावपूर्ण और जीवन-सापेक्ष भाषा में लिखी गई हैं। वे शब्दों के माध्यम से केवल भावों

की अभिव्यक्ति नहीं करते, बल्कि वर्तमान परिवेश, सामाजिक परिस्थितियों और जनजीवन की वास्तविकताओं का सजीव साक्षात्कार कराते हैं। उनकी लेखनी में लोकजीवन की सहजता, मानवीय संवेदनाओं की ऊष्मा और सामाजिक चेतना की प्रखरता स्पष्ट दिखाई देती है। उनकी प्रकाशित कृतियों में “श्वेतांबरा भजनावली” विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जिसने लोकप्रियता का उच्च आदर्श स्थापित किया। इसके अतिरिक्त “साक्षरता गीत” जैसी रचनाएँ सामाजिक जागरूकता की दिशा में उनके सक्रिय योगदान को रेखांकित करती हैं। साहित्य की विविध विधाओंक कहानी, गज़ल, व्यंग्य, भोजपुरी एवं सरगुजिया गीतकृतमें भी उन्होंने उल्लेखनीय सृजन किया। उनके संग्रह “बिखरे मोती”, “गुलदस्ता”, “चप्पल पुराण”, “बैरी बसुरिया” और “सतरंगी करौंदा” आज भी साहित्य जगत में विशिष्ट स्थान रखते हैं। इन कृतियों में जीवन के विविध रंग, हास्य-व्यंग्य की मार्मिकता, लोकभाषा की मधुरता और सामाजिक सरोकारों की गूँज सुनाई देती है। पत्रकारिता के क्षेत्र में भी उनका योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। “सरगुजा समाचार” में उनके नियमित स्तंभकृ “नगर कल्लोल”, “आजाद कलम”, “हालाते शहर” और “सच्चाई के आईने में” कृविशेष रूप से लोकप्रिय रहे। इन स्तंभों के माध्यम से उन्होंने सामाजिक विसंगतियों, प्रशासनिक चुनौतियों और जनजीवन की समस्याओं को सरल, किंतु प्रभावशाली भाषा में अभिव्यक्त किया। उनकी लेखनी में निर्भीकता थी, परंतु साथ ही लोकमंगल की भावना भी विद्यमान रही। उनकी सरलता और आत्मनिष्ठा का परिचय उनके सरगुजिया भाषा में दिए गए आत्मपरिचय से मिलता है—

“नइ हों मैं कवि ज्ञान में, गुन परसा कर फूल।
राम नाम बस लिखे हों, बिसरइहा सब भूल।
तुलसी कर गोड़े गिरों, हवे राम कर आस।
रसिक रहों मैं चरन कर,
जब-जब जन्मों दास।”

4. रसिक जी की रचना-धर्मिता

राम प्यारे रसिक जी की रचना-धर्मिता उनके व्यक्तित्व, जीवनानुभव और सामाजिक प्रतिबद्धता का सजीव प्रतिबिंब है। उनके लिए साहित्य केवल शब्दों का विन्यास या भावों का अलंकरण नहीं, बल्कि लोकमंगल की साधना, सामाजिक जागरण का माध्यम और सांस्कृतिक चेतना का विस्तार है। वे उन रचनाकारों में हैं जिनकी लेखनी जीवन से कटकर नहीं चलती, बल्कि जीवन की धड़कनों के साथ स्पंदित होती है।

उनकी रचना-धर्मिता का मूल आधार लोकजीवन से गहरा जुड़ाव है। सरगुजा की माटी, वहाँ की बोली, संस्कृति, लोकपरंपराएँ और जनमानस की सहज भावनाएँ उनकी काव्य चेतना का प्राणतत्व हैं। उन्होंने लोकभाषा सरगुजिया को केवल अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं बनाया, बल्कि उसे साहित्यिक गरिमा प्रदान की। यह उनकी रचनात्मक प्रतिबद्धता का प्रमाण है कि उन्होंने क्षेत्रीय

भाषा में रामकथा जैसे महाकाव्यात्मक विषय को प्रस्तुत कर उसे जन-जन तक पहुँचाया। इस प्रकार उनकी रचना-धर्मिता लोकसंस्कृति के संरक्षण और संवर्धन से अभिन्न रूप से जुड़ी हुई है।

रसिक जी की लेखनी में भक्ति और मानवीय मूल्यों का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है। उनकी भजन रचनाओं में निर्गुण भक्ति की धारा प्रवाहित होती है, जिसमें ईश्वर के प्रति समर्पण, आत्मिक शांति और आध्यात्मिक उत्कंठा का मार्मिक चित्रण है। किंतु उनकी भक्ति केवल आध्यात्मिक विमर्श तक सीमित नहीं रहती, वह सामाजिक जीवन को भी आलोकित करती है। वे धर्म को आडंबर नहीं, बल्कि आचरण की पवित्रता और मानवीय संवेदना के रूप में देखते हैं।

उनकी रचना-धर्मिता का एक महत्वपूर्ण पक्ष सामाजिक चेतना है। गज़लों, व्यंग्य और स्तंभ लेखन के माध्यम से उन्होंने समय की विसंगतियों, राजनीतिक उतार-चढ़ाव और आम आदमी की पीड़ा को स्वर दिया। वे समाज के सजग प्रहरी की भाँति अन्याय, भ्रष्टाचार और नैतिक पतन पर प्रहार करते हैं, परंतु उनकी भाषा में कटुता नहीं, बल्कि सुधार की भावना रहती है। उनकी लेखनी जनपक्षधर है, जो शोषित और उपेक्षित वर्ग की वेदना को अभिव्यक्त करती है।

पत्रकारिता से जुड़े रहने के कारण उनकी दृष्टि यथार्थपरक और विश्लेषणात्मक रही। नियमित स्तंभों के माध्यम से उन्होंने शहर और समाज की नब्ज को परखा। यही अनुभव उनकी रचनाओं को प्रामाणिकता प्रदान करता है। वे कल्पना के आकाश में उड़ते हुए भी धरती की सच्चाइयों से जुड़े रहते हैं।

5. रामप्यारे रसिक का साहित्यिक प्रेरणा

उनकी रचनाओं की प्रेरणा उनका संघर्षपूर्ण जीवन ही था। गरीबी, पारिवारिक जिम्मेदारियाँ, समाज की असमानताएँ और व्यवस्था की विसंगतियाँ कृये सब उनके साहित्य के मूल स्रोत रहे। उनकी एक प्रसिद्ध पंक्ति—

“लेकर छाले अपने पाँव में, मैं चला रहा अभाव में,
बस पीड़ाओं का ही अब तक करता आया हूँ संचय,
बस इतना ही मेरा परिचय।”⁴

उनके जीवन और साहित्य दोनों का परिचायक है। उनकी रचनाएँ मात्र साहित्यिक सृजन नहीं थीं, बल्कि समाज की पीड़ाओं की दास्तान थीं। उन्होंने गरीबों, दलितों और वंचितों के जीवन-संघर्षों को शब्द दिए और सत्ता के पाखंड का बेखौफ उद्घाटन किया। रामप्यारे रसिक का जीवन एक अद्भुत गाथा है—

संघर्ष का प्रतीक,
आत्मसम्मान का आदर्श,
साहित्यिक बहुमुखिता का उदाहरण।

उन्होंने साहित्य और पत्रकारिता को जनता की आवाज़

बनाया। उनकी निर्भीकता, व्यंग्य की धार, भाषाई विविधता और सामाजिक सरोकार उन्हें विशिष्ट बनाते हैं। वे छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक माटी के ऐसे लाल हैं, जिन्होंने अपने साहित्य और जीवन से आने वाली पीढ़ियों को प्रेरणा देने वाली धरोहर छोड़ी है।

➤ व्यंग्य साहित्य:-

रसिक का व्यंग्य साहित्य हिंदी व्यंग्य परंपरा में उन्हें शरद जोशी और हरिशंकर परसाई की श्रेणी में खड़ा करता है। उनकी रचनाएँ केवल हास्य उत्पन्न नहीं करतीं, बल्कि सामाजिक सोच को बदलने की क्षमता रखती हैं।

उनकी प्रमुख व्यंग्य रचनाएँ—

- चौर्य कला
- कुत्ता आंदोलन
- परिवर्तन
- मैरिज ब्यूरो
- नारद की पाती
- चप्पल पुराण
- नेताजी की स्वर्ग यात्रा
- मौत शाही कुत्ते की

इनमें सरल भाषा और तीखे व्यंग्य का ऐसा अद्भुत संगम है जो पाठक को हंसाते हुए सोचने पर विवश करता है।

➤ ग़ज़लें, गीत और संगीतिक योगदान:-

रसिक की ग़ज़लें सामाजिक यथार्थ और व्यक्तिगत वेदना का मार्मिक चित्रण करती हैं। दर्दों का काफ़िला उनका प्रमुख ग़ज़ल-संग्रह है, जिसमें वे लिखते हैं—

“सीने में जितने दर्दों को रक्खा था पालकर,
अब रख दिया है सामने सबको उछाल कर।
दावा जो कर रहे थे बदल देंगे वक्त को,
दिखला रहा हूँ उनको आईना निकाल कर।”

यहाँ उनकी ग़ज़लें केवल व्यक्तिगत भावनाएँ नहीं, बल्कि समाज के विडंबनापूर्ण यथार्थ का भी उद्घाटन करती हैं। गीतों में उन्होंने श्रृंगार, वीर, वात्सल्य और भक्ति सभी रसों को अपनाया। भोजपुरी गीत-संग्रह बांध ले पिरितिया के डोर उनकी श्रृंगारप्रधान रचनाओं का सशक्त उदाहरण है।

6. सामाजिक एवं राजनीतिक संदर्भों में उनके काव्य-साहित्य का व्यापक चित्रण—

उनका काव्य-संसार केवल शब्दों का विन्यास नहीं, बल्कि समय और समाज का जीवंत दस्तावेज़ है। वे अपने छोटे से शेर में भी गहन सामाजिक यथार्थ को उकेर देते थे—

“है रौशनी नहीं जहां, किसी की नज़र में,

मैं बेचता हूँ आईने को ऐसे शहर में।”

यह शेर केवल निराशा का बयान नहीं, बल्कि उस समाज पर तीखा व्यंग्य है जहाँ सत्य और आत्मावलोकन का अभाव है। यहाँ ‘आईना’ सत्य, चेतना और आत्मचिंतन का प्रतीक है, जिसे वे ऐसे परिवेश में प्रस्तुत कर रहे हैं जहाँ लोग देखने की इच्छा ही खो चुके हैं। इस प्रकार उनका काव्य सामाजिक विसंगतियों और राजनीतिक अंधकार पर सारगर्भित टिप्पणी करता है।

धार्मिक भजनों में उनकी लेखनी पूर्णतः अध्यात्म में निमग्न दिखाई देती है—

“बीच भंवर में नैया मेरी, भगवन दूर किनारा है,
निर्बल हूँ मैं हाथ पकड़ लो, तेरा एक सहारा है।”

यहाँ जीवन-संघर्ष की नैया और ईश्वर में अटूट विश्वास का भाव अत्यंत मार्मिक है। उनके भजनों में दार्शनिक गहराई और समर्पण की तीव्रता है, जो भक्तिकालीन परंपरा की स्मृति जगाती है। उनकी रचनाओं में कबीर की सी निर्भीकता और जीवन-दर्शन की झलक भी स्पष्ट दिखाई देती है—

“जनम मरण के चाक के ऊपर,
इस माटी का पिंजरा।
कोई न जाने कब उड़ जाए,
सांस का बैठा कागा।”

यह जीवन की अनित्यता और सांसारिक मोह के क्षणभंगुर स्वरूप का सशक्त चित्रण है। यहाँ प्रतीकों के माध्यम से वे जन्म-मरण के चक्र और मानव अस्तित्व की नश्वरता को सरल किन्तु प्रभावी ढंग से व्यक्त करते हैं।

7. उपसंहार

रामप्यारे रसिक के काव्य-साहित्य का अध्ययन करने पर यह स्पष्ट होता है कि उनका साहित्य छत्तीसगढ़ी भाषा, लोकजीवन और संस्कृति से गहरे रूप से जुड़ा हुआ है। उनके काव्य में छत्तीसगढ़ की सामाजिक, सांस्कृतिक एवं मानवीय संवेदनाओं का सहज और प्रभावशाली चित्रण मिलता है। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से लोकभाषा की मिठास, लोकपरंपराओं, ग्रामीण जीवन, प्रकृति तथा मानवीय संबंधों को अभिव्यक्ति प्रदान की है। रामप्यारे रसिक के काव्य की प्रमुख विशेषता उसकी सरलता, सहजता, लोकधर्मिता और भावात्मकता है। उनकी रचनाओं में लोकभाषा के शब्दों और मुहावरों का सुंदर प्रयोग दिखाई देता है, जिससे उनका काव्य जनसामान्य के निकट पहुँचता है। उनके साहित्य में मनोरंजन के साथ-साथ सामाजिक चेतना और जीवन-मूल्यों का भी समावेश है। अतः कहा जा सकता है कि रामप्यारे रसिक का काव्य-साहित्य छत्तीसगढ़ी साहित्य की समृद्ध परंपरा में महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

उनका साहित्य न केवल छत्तीसगढ़ी भाषा की अभिव्यक्ति-क्षमता को सामने लाता है, बल्कि छत्तीसगढ़ की लोकसंस्कृति और जनजीवन को संरक्षित एवं समृद्ध करने में भी योगदान देता है।

संदर्भ ग्रन्थो सूची

1. रसिक, राम प्यारे. भक्ति एवं पौराणिक काव्य-संग्रह. लोकभारती प्रकाशन, रायपुर, 2008.
2. रसिक, राम प्यारे. "चयनित स्तंभ." नगर कल्लोल, अंबिकापुर, विभिन्न अंक (1998-2010).
3. रसिक, राम प्यारे. "सामाजिक एवं राजनीतिक लेख." सरगुजा समाचार, अंबिकापुर, विभिन्न अंक (2000-2012).
4. शुक्ल, रामचंद्र. हिंदी साहित्य का इतिहास. नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, 2012 (पुनर्मुद्रित संस्करण).
5. द्विवेदी, हजारीप्रसाद. हिंदी साहित्य की भूमिका. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015.
6. वर्मा, रामकुमार. आधुनिक हिंदी साहित्य. लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2014.
7. त्रिपाठी, केदारनाथ. हिंदी साहित्य में व्यंग्य परंपरा. साहित्य भवन, प्रयागराज, 2011.